भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक :
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2024

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 66 - 0

मूल्य - 300/-

रचना - भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

आर्य समाज के हिन्दी साहित्य में महिला जागरण

नरेन्द्र सिंह नाथावत
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

19वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध वस्तुतः पुनर्जागरण का इतिहास है। इस काल में सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जागरण का उन्नयन हुआ। इस काल खण्ड में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, सत्य शोधक समाज, अन्य सम्प्रदाय इत्यादि ने अहिर्निश जनजागृति का आन्दोलन प्रारम्भ किया। इन आन्दोलनों में आर्य समाज का आन्दोलन सबसे सशक्त और प्रभावशाली सिद्ध हुआ। महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा 1875 ई. में आर्य समाज की स्थापना बम्बई में मानिकचन्द की वाटिका में की गई। लाहौर में आर्य समाज के दस नियम स्वीकार किये गये। जिनमें संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उपदेश माना गया अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

19वीं शताब्दी में महिलाओं की स्थिति दयनीय थी। तत्कालीन स्थितियों में अविद्या, पाखण्ड, अविश्वास, बाल विवाह, सती प्रथा, अनमेल विवाह, महिलाओं का क्रय-विक्रय इत्यादि के कारण महिलाओं की स्थिति चिन्ताजनक थी। उनको पुरुषों की तुलना में हेय माना जाता था। मैथिलीशरण गुप्त ने इसका वर्णन व मार्मिक चित्रण 'भारत भारती' में किया है। द्विवेदी युग के अन्तर्गत रचित साहित्य में 'पंचपुकार' में जाति-पांति और छुआछूत का वर्णन है।

रामधारी सिंह दिनकर ने पुनरुत्थान की प्रवृत्ति में महिलाओं के उत्थान को सर्वांग दृष्टि से विवेचित किया है। आर्य समाज विचारधारा के प्रसिद्ध कवि नाथूराम शर्मा, शंकर लोचन प्रसाद पाण्डे, श्रीधर पाठक, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचन्द, मैथिलीशरण गुप्त, सैय्यद अमीर अली, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔद्य, ठाकुर गोपाल शरण सिंह, गणपतिचन्द्र भण्डारी, नारायण प्रसाद 'बेताब', चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, जगन्नाथ उपाध्याय, चतुरसेन शास्त्री, सुदर्शन, ठाकुर गदाधर सिंह, पं. तोताराम सनाढ्य, आचार्य धर्मेन्द्रनाथ, पदम सिंह शर्मा, डॉ. नगेन्द्र, मुंशीराम शर्मा, राधा मोहन गोकुल, गणेशशंकर विद्यार्थी, रुद्रदत्त शर्मा, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', वासुदेव शरण अग्रवाल, सुनीति देवी,

संतराम बीए, दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, दिवाकर प्रसाद शास्त्री, जगन्नाथ दास रत्नाकर, पं. आर्यमुनि लोकनाथ वाचस्पति, कवि जयगोपाल, रामनारायण चतुर्वेदी इत्यादि साहित्यकार कवि, पत्रकार, भजनोपदेशक, संन्यासी, स्वतंत्रता सेनानी इत्यादि ने आर्य समाज के हिन्दी साहित्य के विविध आयामों में महिला जागरण के बहुआयामी पक्षों में सुधार का विश्लेषण किया है।

19वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध** भारत के इतिहास में वास्तविक अर्थों में पुनर्जागरण का युग था। इस कालखंड में भारतीय समाज के विभिन्न क्षेत्रों में—सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक—व्यापक जागृति का संचार हुआ। इसी दौर में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, सत्यशोधक समाज और अन्य अनेक सम्प्रदायों ने निरंतर जनजागरण के आन्दोलन प्रारम्भ किए। इन सभी आन्दोलनों में आर्य समाज का आन्दोलन सर्वाधिक प्रभावशाली और दूरगामी सिद्ध हुआ। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सन् 1875 ई. में बम्बई (वर्तमान मुंबई) में मानिकचन्द की वाटिका में आर्य समाज की स्थापना की। बाद में लाहौर अधिवेशन में आर्य समाज के दस नियम स्वीकृत किए गए, जिनमें 'संसार का उपकार करना' इस समाज का प्रधान उद्देश्य माना गया। इसका अभिप्राय था मनुष्य की शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

उस समय महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। शिक्षा के अभाव, पाखण्डपूर्ण धार्मिक मान्यताओं, अंधविश्वासों, बाल विवाह, सती प्रथा, अनमेल विवाह और स्त्रियों के क्रय-विक्रय जैसी कुप्रथाओं ने नारी जीवन को दु:ख और हीनता में धकेल दिया था। स्त्रियों को पुरुषों की तुलना में तुच्छ और निर्बल माना जाता था। इसी स्थिति का सजीव और हृदयस्पर्शी चित्रण मैथिलीशरण गुप्त ने अपनी कृति भारत-भारती में किया है। इसी प्रकार द्विवेदी युग के साहित्य में भी जातिपांति, छुआछूत और सामाजिक विषमताओं के साथ-साथ स्त्रियों की दीन दशा का मार्मिक चित्रण मिलता है, जैसे 'पंचपुकार' काव्य में।

रामधारी सिंह दिनकर ने पुनरुत्थान की प्रवृत्ति के संदर्भ में महिलाओं के उत्थान को व्यापक दृष्टि से परखते हुए उसे राष्ट्रीय प्रगति का अभिन्न अंग माना है। आर्य समाज के विचारों से प्रेरित अनेक साहित्यकारों, कवियों और चिन्तकों ने महिला जागरण और उनके अधिकारों की रक्षा को अपने लेखन और कार्यों का प्रमुख विषय बनाया। इनमें नाथूराम शर्मा, शंकरलोचन प्रसाद पाण्डे, श्रीधर पाठक, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचन्द, मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध्य', ठाकुर गोपाल शरण सिंह, गणपतिचन्द्र भण्डारी, नारायण प्रसाद 'बेताब', चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, चतुरसेन शास्त्री, सुदर्शन, ठाकुर गदाधर सिंह, पं. तोताराम सनाढ्य, आचार्य धर्मेन्द्रनाथ, पद्मसिंह शर्मा, गणेशशंकर विद्यार्थी, रुद्रदत्त शर्मा, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', वासुदेवशरण अग्रवाल,

संतराम बी.ए., जगन्नाथ दास रत्नाकर, पं. आर्यमुनि लोकनाथ वाचस्पति, कवि जयगोपाल और रामनारायण चतुर्वेदी आदि प्रमुख हैं।

इनमें से कोई कवि थे, कोई पत्रकार, कोई भजनोपदेशक, कोई संन्यासी और अनेक स्वतंत्रता सेनानी भी। सभी ने अपने-अपने ढंग से आर्य समाज के साहित्यिक और सामाजिक आन्दोलन को आगे बढ़ाया और महिला-जागरण के विविध पहलुओं पर चिंतन-मनन प्रस्तुत किया। इस प्रकार आर्य समाज के प्रभाव से हिंदी साहित्य में महिला-जागरण की एक व्यापक धारा विकसित हुई, जिसने भारतीय पुनर्जागरण को सशक्त आधार प्रदान किया।

श्रीधर पाठक ने '**आर्य महिला**' कविता में महिला जागरण और उसकी महिमा का उल्लेख करते हुए लिखा है-

''अहो पूज्य भारत-महिला-गण, अहो आर्यकुल प्यारी,
अहो आर्य-गृहलक्ष्मी, सरस्वती, आर्य लोक उजियारी।
आर्य जगत में पुनः जननि निज जीवन-ज्योति जगाओ,
आर्य हृदय में पुनः आर्यता का, शुचि स्त्रोत बहाओ।।''

मैथिलीशरण गुप्त ने महिला उपेक्षा और उनकी दयनीय दशा को अपने प्रसिद्ध महाकाव्य '**भारत भारती**' में कहा है-

ऐसी उपेक्षा नारियों की जब स्वयं हम कर रहे,
अपना किया अपराध उनके शीश पर हैं धर रहे,
भागें न क्यों हमसे भला फिर दूर सारी सिद्धियां,
पातीं स्त्रियां आदर जहां रहती वहीं सब ऋद्धियां।।

नाथूराम शंकर शर्मा ने अपने चर्चित '**पुरानी पाठशाला**' में लिखा है-

पढ़ विद्या प्रण-पाल, ज्ञान गिरि पै चढ़ते थे,
कर पूरा व्रत-काल, ब्रह्मकुल से कढ़ते थे।
तरुण स्नातक विज्ञ, वधू विदुषी करते थे,
दोनों सुदृढ़ प्रतिज्ञ, प्रेम-सागर तरते थे।
धर्म सुकर्म कलाप, समोद किया करते थे,
दम्पत्ति मेल मिलाप, स्नेह पिया करते थे,
फिर योगी गतराग, परिव्राजक बनते थे।
दे दे कर उपदेश, देश भर में फिरते थे
पर न त्याग उद्देश्य, किसी घर में घिरते थे।
जिनके चारु चरित्र, सदागम सिखा रहे हैं।
उनके चित्र विचित्र निदर्शन दिखा रहे हैं।

आर्य समाज ने महिला जागरण को केवल एक सैद्धान्तिक विचार

तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे व्यावहारिक स्तर पर भी मूर्त रूप प्रदान किया। समाज ने नारी के प्राचीन गौरव को पुनः स्मरण कराते हुए उनके अधिकारों और कर्तव्यों को रेखांकित किया। इसके अंतर्गत नारी शिक्षा का प्रचार, नारी के गृहस्थ-धर्म की प्रतिष्ठा, तथा पर्दा-प्रथा, सती-प्रथा, बहुविवाह और अनमेल विवाह जैसी कुप्रथाओं का दृढ़ खण्डन किया गया।

सन् 1907 ई. में जगतसिंह के व्याख्यानों से स्पष्ट होता है कि उन्होंने बालविवाह का विरोध करते हुए आर्य सिद्धान्तों का प्रचार किया। इसी दिशा में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भी स्त्रियों के अपमानजनक चित्रण का विरोध किया। उन्होंने रामचरित मानस की उस परंपरा पर आपत्ति प्रकट की जिसमें महिलाओं को ढोल और गंवार की श्रेणी में रखा गया था। उनके शब्दों में स्त्रियों का शोषण और अपमान मार्मिक ढंग से व्यक्त हुआ है—

''महामलिन से मलिन से मलिन काम हम करती हैं दिनरात,
हे भगवान हाय! तिस पर भी उपमा कैसी पाती हैं,
ढोल तुल्य ताड़न अधिकारी हमीं बताई जाती हैं।''

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने महिला परिषद के गीत में नारियों में प्रचलित अज्ञान की ओर संकेत करते हुए शिक्षा के महत्व पर बल दिया—

पढ़ती थीं वेद तक जहां महिला सदैव ही,
नारी समूह है वहीं अज्ञात हमारा।

इसी प्रकार उनके 'कान्यकुब्ज अबला विलाप' पद्य में अशिक्षा की पीड़ा को मुखर स्वर दिया गया—

पर हम जो घर में ही रहतीं, जिनसे सब सुख पाते हो,
उन्हें मूर्ख रखने में क्यों तुम, जरा नहीं शरमाते हो।

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपनी पत्रिका 'सरस्वती' के माध्यम से भी नारी के प्रति आदरभाव जागृत किया। उनका कथन था—

''जहाँ हमारा आदर होता, वहीं देवता करते वास।''

महिला जागरण पर टिप्पणी करते हुए डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्त ने लिखा कि प्राचीन मर्यादा, आदर्श शिक्षा और संस्कृति की ओर स्त्रियों को आकृष्ट करने में आर्य समाज के प्रयासों का ही परिणाम है कि हिंदू समाज में संतुलन बना रहा। यदि यह न हुआ होता तो पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित स्त्रियाँ परंपरा और व्यवस्था के विरुद्ध अनुचित विद्रोह कर बैठतीं।

इसी संदर्भ में पार्वती देवी ने अपनी कविता 'काव्यकुसुमांजलि' में प्रतिपादित किया कि शिक्षा के विस्तार से ही देश का वास्तविक विकास संभव है। वहीं मैथिलीशरण गुप्त ने पुरुषों की भर्त्सना करते हुए स्वीकार किया कि महिलाओं के उत्थान में सबसे

बड़ा अवरोध स्वयं पुरुष ही रहे हैं।

''विद्या हमारी भी न तब तक काम में कुछ आयेगी,
अर्द्धांगिनियों को भी सु-शिक्षा दी न जब तक जायेगी।
सर्वांग के बदले हुई यदि व्याधि पक्षाघात की,
तो भी न क्या दुर्बल तथा व्याकुल रहेगी बातकी।''

नाथूराम शंकर ने 'प्रचण्ड प्रतिज्ञा' में लिखा है-

''सुशील बालिकाओं को लिखायेंगे-पढ़ावेंगे।
न कोरी कर्कशाओं को वृथा सोना गढ़ावेंगे।।
प्रवीणा को प्रतिष्ठाा के महाचल पे चढ़ावेंगे।
सती के सत्य की शोभा प्रशंसा से बढ़ावेंगे।''

यही नहीं **कवि शंकर** ने अनमेल विवाह तथा अन्य कुरीतियों के विषय 'कजली-कलाफ' में लिखा है-

''अठबरसी बरनी ने पाए, सठबरसे भरतार।
इस विजय से पढ़े न दुर, दुर, छी छी की बौछार।
लाखों घर उजाड़ कर डाले, घटे घने परिवार
तो भी आय महामारी का, हुआ न कुछ प्रतिकार।।''

जबकि आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने बाल विवाह की कुरीतियों का विरोध किया है-

''कभी-कभी गुड़िया-सी, बचपन में ही ब्याही जाती है,
जिसके कारण ही अति दुःसह दुख जन्म भर पाती हैं।
प्यारे पिता, बन्धुवर, तुम कब भला होश में आवोगे,
कब हम दुखी दीन अबलाओं पर तुम दया दिखाओगे।''

गोपाल शरण सिंह ने '**भारतीय विद्यार्थियों के कर्त्तव्य**' में महिला शिक्षा के महत्व को उल्लिखित करते हुए लिखा है-

''हैं विद्या-वंचिता यहां महिलाएं सारी,
होती है नित हानि देश की जिससे भारी।
क्या अचरज सन्तान निकम्मी जो वे जनतीं,
यो जो सहज शिकार दुर्गुणों की है बनतीं।
समुचित प्रबन्ध उनके लिये शिक्षा का सत्वर करो,
मित्रों! समूल गृह-देवियों की सब दुख-चिन्ता हरो।''

लोचन प्रसाद ने महिला उत्थान से संबंधित '**हमारा अद्यः पतन**' कविता में लिखा है-

''कैसी निःसवकारी प्रचलित हम में, बाल ब्याह प्रथा है

हा! हा! सर्वस्वहारी प्रतिफल, जिसको देख होती व्यथा है।
क्षीणायु प्राण-रंक व्यथित कर हमें रोग से फांस सर्ग,
खाया सारे गुणों को गिन गिन इसने तोड़ के आर्य गर्व।।''

श्रीधर पाठक, नाथूराम शंकर, मैथिलीशरण गुप्त, गोपाल शरण सिंह इत्यादि कवियों ने बालविवाह, अशिक्षा, अनमेल विवाह इत्यादि पर सशक्त भाषा में कटाक्ष करते हुए चुनौतियाँ दी है। शंकर ने लिखा है-

''बाल विवाह विशाल, जाल रच पाप कमाया।
ब्रह्मचर्य-व्रत काल, वृथा विपरीत गमाया।।
अबला ने चुपचाप, उणय पछाड़ा मुझको।
बेटा जनकर बाप, बनाथ बिगाड़ा मुझको।।''

तथा

''विषधारी बाल विवाह, डस गयौ भारत को।
सात साल की बरनी वारी, अठबरसौ वर निपट अनारी।
इनहूं ते लघु और घनेरे, घर-घर धरती नाह।।''

आर्य समाज के नारी जागरण संबंधी प्रभाव को केवल सामाजिक सुधारों तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि इसे साहित्यकारों ने भी अपनी रचनाओं में बड़े आदर और गौरव के साथ अभिव्यक्त किया। रामचरित उपाध्याय ने अपनी कविता 'स्त्री रत्न' में स्त्री को उदात्त गुणों की प्रेरणा देने वाली जननी के रूप में चित्रित किया है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि नारी केवल परिवार की संरक्षिका ही नहीं, बल्कि समाज में उच्च आदशोज़्ं और संस्कारों की जननी भी है।

इसी क्रम में हरिऔद्य ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'रस कलश' में आर्य समाज की प्रेरणा और उसके उज्ज्वल प्रभाव को स्वीकार करते हुए नारी को अनेक नवीन रूपों में प्रस्तुत किया। उन्होंने स्त्री को केवल एक सीमित घरेलू व्यक्तित्व न मानकर वेश प्रेमिका, जाति प्रेमिका, जन्म प्रेमिका, लोक सेविका और धर्म प्रेमिका जैसे विविध रूपों में प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार नारी को समाज और राष्ट्र के उत्थान की सहभागी शक्ति के रूप में चित्रित किया गया।

हरिऔद्य की अन्य कृति 'प्रिय प्रवास' का एक विशेष सर्ग तो नारी गौरव के समर्पण का ही प्रतीक कहा जा सकता है। यह सर्ग नारी की गरिमा, उसके त्याग, सेवा और आदशज़् जीवन का सजीव चित्रण करता है।

इसी प्रकार उनकी कविता 'आर्या बाला' में आदर्श नारी की प्रशस्ति की गई है। यहाँ स्त्री को केवल कोमल हृदय और सौंदर्य की प्रतिमा नहीं, बल्कि त्याग, करुणा, साहस और उच्च जीवन मूल्यों की संवाहिका बताया गया है। हरिऔद्य ने नारी को परिवार, समाज और राष्ट्र की नैतिक धुरी के रूप में स्वीकार कर उसके

उदात्त गुणों का अत्यंत प्रभावशाली ढंग से वर्णन किया है।

मैथिलीशरण गुप्त ने कहा है-

**''अल्पायु में है हम सुतों का ब्याह करते किसलिए?
ग्राहस्थ्य का सुख शीघ्र ही पाने लगें वे, इसलिए।
वात्सल्य है या वैर है यह, हाय! कैसा कष्ट है?
परिपुष्टता के पूर्व ही बाल-वीर्य होता नष्ट है।''**

गोपालकृष्ण सिंह ने दहेज की कुप्रथा पर लिखा है-

**''भगवान हो उत्थान हिन्दू जाति का कैसे भला?
नित यह कुरीति दहेज वाली घोंटती उसका गला।
अगणित कुटुम्बों का किया इस राक्षसी ने नाश है।
तो भी मुझे न अभी अहो! इसकी रुधिर की प्यास है।''**

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भी दहेज प्रथा की कुरीतियों पर व्यंग्य करते हुए लिखा है-

**''बिकता नहीं वर है यहां, बिकती तथा कन्या कहीं।
क्या अर्थ के आगे हमें अब इष्ट आत्मा भी नहीं।
हाँ! अर्थ, तेरे अर्थ हम करते अनेक अनर्थ हैं।
धिक्कार! फिर भी तो नहीं सम्पन्न और समर्थ हैं।''**

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने दहेज से होने वाली नारी की अवनति के विषय में लिखा है-

**लड़के के विवाह में कहिए मोल-तोल क्यों करते हो?
इस काले कलंक को हा! हा! क्यों अपने सिर धरते हो?
जिनके नहीं शक्ति देने की क्यों उनका धन हरते हो?
चढ़कर उच्च सुयश-सीढ़ी पर क्यों इस भांति उतरते हो?**

स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय समाज में दहेज प्रथा एक गंभीर सामाजिक अभिशाप के रूप में विद्यमान थी। इस प्रथा के कारण अनेक निर्दोष कन्याओं को अपने जीवन की आहुति देनी पड़ी। इसी संदर्भ में मिट्टी का तेल डालकर दहेज की बलि चढ़ने वाली कन्या की घटना ने कवि पाण्डेय लोचन प्रसाद को गहराई से व्यथित किया और उन्होंने 'स्नेहलता' जैसी प्रभावशाली कविता की रचना की। इस कविता में पीड़िता नारी का करुण क्रंदन और सामाजिक बुराई के विरुद्ध तीव्र आह्वान मुखरित होता है-

**''हे आर्यो! मैं यह स्नेहलता जलती हूं।
कर्त्तव्य पूर्ण कर अम्ब निकट चलती हूं।।
तम हरे तुम्हारे हृदयों का, यह ज्वाला।
दुख सहें न घर-धर आर्य षोडशी बाला।**

मेरे हित पैतृक घर था बेचा जाता।
दे कन्या जन्म न भारत में तू, धाता।।''

यहाँ कवि ने दहेज-प्रथा को केवल पारिवारिक नहीं, बल्कि राष्ट्रीय कलंक बताया है। 'स्नेहलता' की वाणी आर्य समाज और आर्य समाजियों से सीधा संवाद करती हुई प्रतीत होती है।

इसी संदर्भ में डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्त ने लिखा है कि ''आर्य समाज के प्रचार ने तत्कालीन सहृदय और बुद्धिवादी विद्वानों को गहन रूप से प्रभावित किया। इसने न केवल स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा की, बल्कि उन्हें आदर्श मार्ग का भी निर्देश किया।''

स्पष्ट है कि आर्य समाज ने नारी-उत्थान और अधिकार-सुरक्षा की दिशा में सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक दोनों स्तरों पर ठोस पहल की।

दहेज-प्रथा की भीषणता का उल्लेख आर्य सेवक समाचार पत्र में भी हुआ। उसमें प्रकाशित समाचार ने तत्कालीन समाज को झकझोर दिया। उसमें कलकत्ता की एक हृदय विदारक घटना का विवरण था- ''कुमारी स्नेहलता देवी ने अपने पिता को दहेज देने में असमर्थ समझकर मिट्टी के तेल से अपने को जला लिया। इस घटना से कलकत्ता में अनेक सभाएँ आयोजित हुईं, जिनमें यह निश्चय किया गया कि दहेज की प्रथा को हर हाल में दूर करना होगा। इस आंदोलन से युवक भी चौंक उठे और उन्होंने निश्च किया कि यदि कोई दहेज देगा तो उसकी कन्या से विवाह नहीं करेंगे।''

इस प्रकार आर्य समाज और उससे प्रेरित साहित्यकारों तथा पत्र-पत्रिकाओं ने नारी अधिकारों और गरिमा की रक्षा हेतु सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध सशक्त आवाज़ उठाई। इससे स्पष्ट होता है कि आर्य समाज का प्रभाव केवल धार्मिक और शैक्षिक सुधारों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने नारी जागरण और सामाजिक पुनर्जागरण की दिशा में निर्णायक योगदान दिया।

आर्य समाज ने नारी-उत्थान के क्षेत्र में जहाँ शिक्षा, दहेज-प्रथा उन्मूलन, विधवा-विवाह, पर्दा-प्रथा और सती-प्रथा जैसी कुरीतियों के विरोध में महत्वपूर्ण कार्य किया, वहीं अंधविश्वासों के विरुद्ध भी सशक्त आंदोलन चलाया। उस समय समाज में महिलाओं के बीच फलित-ज्योतिष, टोने-टोटके, भूत-प्रेत, ग्रह-नक्षत्रों की कुप्रथाओं का गहरा प्रभाव था। आर्य समाज ने इनके विरुद्ध तर्कपूर्ण विचार रखकर महिलाओं को जागरूक किया और उन्हें वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया।

इसी संदर्भ में श्रीधर पाठक ने महर्षि दयानन्द की दूरदृष्टि और उनके सुधारात्मक महत्व को स्वीकार करते हुए स्पष्ट कहा है कि स्वामीजी ने भारतीय समाज को इन अंधविश्वासी मान्यताओं की बेड़ियों से मुक्त कराने का युगांतरकारी कार्य

किया। उनके मत में दयानन्द के इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने विशेषकर महिलाओं को नए विवेक और आत्मबल से संपन्न किया। उन्होंने कहा –

''है अंतिम मुनि दयानन्द, सुमिरत सुख भारी।
जय-जय भुवि भार हरन, भारत हितकारी।।''

कवि शंकर ने अपने साहित्य में समाज-सुधार, छुआछूत जैसी समस्याओं को स्वर दिया और इनके उन्मूलन के लिए काव्य के माध्यम से जन-जागरण का प्रयास किया। इसी क्रम में उन्होंने 'पंच पुकार' तथा 'पंच प्रपंच' जैसी कृतियों में सामाजिक विकृतियों का पर्दाफाश किया।

इसी दिशा में कवि बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन'** ने बाल-विवाह जैसी अमानवीय प्रथा पर गहरा कटाक्ष किया। उन्होंने अपने पद्य में यह मार्मिक चित्र खींचा है कि एक नन्ही-सी दुल्हन को गोदी में उठाकर खेल-खिलौने की भांति व्यवहार किया जाता है। वह स्वयं चलने-फिरने की भी सामर्थ्य नहीं रखती और संकोचवश लज्जा से भर जाती है। कवि बालिका की व्यथा को उसकी ही अंतरात्मा की पीड़ा के रूप में इस प्रकार व्यक्त करते हैं-

''नई दूल्ही बनाय, गोदी तोहके उठाय,
मुंह चूमब खेलाय, मोरे बारे बारे बलमूं।
पावे पांवों न उठाय छाती, बाल पिय पाय।
गोरी कह तो सरमायू मोरे बारे बलमूं।
'प्रेमधन' अकुलाय, रस बिना बिलखाय,
कहे खिल्ली सी उड़ाय, मोरे बारे बलमूं।।''

इस पद्य के माध्यम से कवि ने बाल विवाह की हृदयविदारक त्रासदी का चित्रण करते हुए समाज को आईना दिखाया है। बालिका की असहायता और उसकी कोमल भावनाओं की उपेक्षा ने पाठकों के हृदय को झकझोर दिया।

अनमेल विवाह की अमानवीयता पर कवि ने स्पष्ट शब्दों में कटाक्ष किया है। बालिका-वधू के हृदय की व्यथा इस पद्य में जीवंत हो उठती है। वह कहती है कि-

''आगि लगि तोहरी, जरतारी, सारी लहंगा चोली रामा,
हरि-हरि तुहऊँ के घरि खाय नाग कहूं काला रे हरी।
जब लग चढ़े जवानी हम पर तब तक तू मरि जाव्य रामा,
हरि-हरि तब हमार फिर होय कवन हवाला रे हरी।
फेरि कैसे मन मिले कह तो मुरदा ओ जिन्दा कै रामा।।''

यह कविता समाज में उस समय प्रचलित बाल-विवाह और अनमेल विवाह की क्रूरता को बड़ी तीक्ष्णता से प्रकट करती है। इसमें युवती की लाचारी, असमान

आयु के विवाह से उत्पन्न मानसिक और शारीरिक पीड़ा का बड़ा ही करुण और यथार्थ चित्रण हुआ है।

द्विवेदी युग में महिलाओं की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण उनकी कविताओं में ध्वनित हुआ है-

''नहिं इनके तन रूधिर मांस नहीं वसन समुज्ज्वल,
नहिं इसकी नारिन तर भूषण हाय आजकल,
सूखे वे मुख कमल केश रूखे जिन कैरे,
वेश मलिन, छीन तन, कुवि हत जात न हेरे।।''

आर्य स्त्रियों के विषय में स्त्रियों के उदात्त विचारों को **मैथिलीशरण गुप्त** ने निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त किया है-

निज स्वामियों के कार्य में समभाग जो लेतीं न वे,
अनुरागपूर्वक योग जो उसमें सदा देतीं न वे,
तो फिर कहातीं किस तरह 'अर्द्धांगिनी' सुकुमारियाँ,
तात्पर्य यह-अनुरूप ही थीं नरवरों की नारियाँ।

श्रीधर पाठक ने 'देश सुधार' शीर्षक के अंतर्गत स्पष्ट कहा कि यदि राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल बनाना है, तो नारी शिक्षा को प्रोत्साहन देना होगा। उनका मानना था कि शिक्षा से ही स्त्रियाँ अपने अधिकारों और कर्तव्यों को समझ सकेंगी तथा अपने परिवार और समाज को नई दिशा दे पाएंगी।

प्रताप नारायण मिश्र ने भी भारतीय संस्कृति और शिक्षा के महत्व को अत्यधिक रूप से स्वीकार किया। उनके विचार से स्त्रियों की स्थिति समाज का दर्पण है। यदि स्त्री शिक्षित और सुसंस्कृत होगी तो परिवार संस्कारवान बनेगा और राष्ट्र उन्नति के पथ पर अग्रसर होगा।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने 'सद्धर्म प्रचारक' साप्ताहिक पत्र के माध्यम से महिला-जागरण का व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत किया।

आर्य समाज के प्रभाव से अन्य विचारकों और कवियों ने भी महिला-जागरण के क्षेत्र में सक्रिय योगदान दिया।

पं. राधाचरण गोस्वामी वैष्णव परंपरा से जुड़े होने पर भी उन्होंने आर्य समाज की स्त्री-शिक्षा संबंधी नीति को स्वीकार किया और समर्थन दिया। चौधरी नवल किशोर सिंह अपने भजनों के द्वारा महिलाओं में आत्मविश्वास और उत्थान की प्रेरणा दी। अमीचन्द मेहता आर्य सिद्धांतों का प्रचार करके महिला उत्थान को गति प्रदान की। उन्नति का साधन नारी शिक्षा है—इस भाव को कवियों ने अपने पद्य में स्पष्ट रूप से रखा। उन्नति का साधन नारी शिक्षा में स्त्रियों पर अत्याचारों के विषय में निम्नांकित पद्य प्रस्तुत किये हैं-

आज स्त्री-जाति पर है अत्याचार नहीं छानी,
होता दुर्व्यवहार जो उसकी कहें आपको क्या कहानी।
पहले तो लड़की के जन्म पर कहो खुशी किसने मानी,
लालन पालन में भी बोलते रहे सदा खोटी वाणी।
मात-पिता को निज कर्त्तव्य का जब तक भान नहीं होगा।।
निश्चय जानो..........
भाई रे! बात एक सुन जाओ,
जुल्म किए देवियों के साथ में,
पीछे रख दीं सभी बात में,
अब तो इन्हें उठाओ।।
भाई रे.........
शादी में कम खर्च लगाना,
इस खर्चे से इसे पढ़ाना,
ज़ेवर मत बनवाओ।।
भाई रे...........
गर सुख इज्जत की है चाहना,
घर को है यदि स्वर्ग बनाना,
इनको अवश्य पढ़ाओ।।
भाई रे........................

नाथूराम शंकर ने विधवाओं के कृन्दन को निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत किया है-

''सारी सहें शोक सन्ताप, व्याकुल विधवा करें विलाप।
जरो सुहाग पिया के संग, तरसत रहे अछूते अंग।
तबहिं ते अबलो बेचैन, मैं दुख भोगत हूं दिन रैन।
इन अन्यायिन को अन्याय, अब तो सहयोग न देखो जाय।
भयो कठोर अरे करतार, हम को मार की संकट टार।।''

यद्यपि ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने 1856 ई. में 'हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम' पारित कराकर इसे कानूनन वैधता प्रदान कर दी थी, परंतु यह सुधार केवल कानून की पुस्तकों तक ही सीमित रह गया था। समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाना कहीं अधिक कठिन कार्य था। विधवा को पुनर्विवाह का अधिकार तो मिल गया, परंतु रूढ़िवादी समाज में इसे स्वीकार करने का साहस बहुत कम लोग कर पाए।

ऐसे समय में आर्य समाज ने आगे बढ़कर इस विषय को लोक-जागरण

का हिस्सा बनाया। उपदेशों और प्रवचनों में यह स्पष्ट कहा गया कि वेद-विहित धर्म में विधवा को पुनर्विवाह की अनुमति है। भजनों और गीतों द्वारा जन-भावनाओं को जाग्रत किया गया और समाज को भावनात्मक स्तर पर प्रभावित किया गया। शास्त्रार्थों और वाद-विवादों में प्रामाणिक प्रमाणों के साथ सिद्ध किया गया कि विधवा-पुनर्विवाह धर्म-सम्मत और समाज के लिए हितकारी है।

आर्य समाज के प्रभाव से अनेक कवियों ने सामाजिक सुधार के आदर्शों को अपनाया। मैथिलीशरण गुप्त ने विशेष रूप से यह माना कि आर्य होना केवल नाम की बात नहीं है। सच्चा आर्य वही है जो सत्कर्म और जनहितकारी कार्यों में संलग्न रहता है।

उन्होंने अपनी पंक्तियों में स्पष्ट कहा-

''जन जान ले कि न आर्य केवल नाम के ही आर्य हैं,
वे नाम के अनुरूप ही करते सदा शुभ कार्य हैं।''

यहाँ गुप्त जी ने आर्य समाज के वास्तविक आदर्शों को रेखांकित किया, जहाँ नाम और कर्म में कोई विरोधाभास न हो।

मैथिलीशरण गुप्त ने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'साकेत' में नारी के कर्तव्यों और उसकी महत्ता का सूक्ष्म विवेचन किया। उनके अनुसार नारी केवल परिवार का अंग न होकर पुरुष की अर्धांगिनी है। मातृ-सिद्धि और पितृ-सत्य जैसे उच्च आदर्श भी तब तक अधूरे हैं जब तक नारी अपने कर्तव्य और सामर्थ्य से उन्हें पूर्ण न करे। नारी के बिना पुरुष का जीवन अधूरा है और उसका पुरुषार्थ तभी संपूर्ण हो सकता है जब नारी उसमें सहभागी बने। उन्होंने अत्यंत मार्मिक शब्दों में कहा-

मातृ-सिद्धि, पितृ-सत्य सभी, मुझ अर्द्धांगी बिना अभी।
हैं अर्द्धांग अधूरे ही, सिद्ध करो तो पूरे ही।

आर्य समाज की प्रेरणा के बाद हिन्दी प्रदीप पत्र के संपादक बालकृष्ण भट्ट ने बाल-विवाह के दुष्परिणामों पर गहन टिप्पणी की। उनका स्पष्ट मत था कि यदि बाल-विवाह की प्रथा समाज से समाप्त कर दी जाए, तो विवाह योग्य पुरुषों की संख्या कुछ समय के लिए अवश्य कम प्रतीत होगी। किंतु इस स्थिति में विधवा-विवाह की आवश्यकता अपने आप कम हो जाएगी, क्योंकि विवाहित जीवन अधिक स्थायी और संतुलित होगा।

इसी प्रकार कवि राधाकृष्णदास ने अपनी रचना 'दुखिनी बाला' में उस नारी की वेदना को स्वर दिया, जो बाल-विवाह और जन्मपत्री मिलान जैसी कुप्रथाओं की शिकार थी। उनकी पंक्तियाँ इस विचार को अत्यंत मार्मिक रूप से प्रस्तुत करती हैं-

विद्या हमारी भी न तब तक काम में कुछ आयगी।

अर्द्धांगिनियों को भी सु-सुशिक्षा दी न जब तक जायगी।
सर्वांग के बदले हुई यदि व्याधि पक्षाघात की।
तो भी न क्या दुर्बल तथा व्याकुल रहेगी वातकी।

आर्य समाज ने सामाजिक सुधार के समग्र कार्यक्रम में नारी शिक्षा को सर्वाधिक महत्व दिया। उनका विश्वास था कि स्त्रियों को शिक्षित किए बिना भारत की उन्नति संभव नहीं है। आर्य सेवक पत्रिका जून, 1914, पृ. 9 में स्पष्ट शब्दों में कहा गया कि स्त्री शिक्षा के बिना भारत को गर्त से बचाना एक बड़ा मामला है।

आर्य समाज के समर्थक कवि बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' ने अनमेल विवाह की भयावहता और उससे उत्पन्न स्त्री-पीड़ा का चित्रण किया। उन्होंने लिखा कि जब किसी युवती का विवाह वृद्ध पुरुष से कर दिया जाता है, तो पति की मृत्यु के बाद वह युवावस्था में ही विधवा हो जाती है। ऐसी स्त्री का पूरा जीवन मायके में ही दुख, तिरस्कार और असंतोष में बीतता है। उसे यह पीड़ा सालती है कि विवाह के समय उसकी अनुमति क्यों नहीं ली गई।

इसी संदर्भ में कवि शंकर ने समाज में विधवाओं की शोचनीय स्थिति का बड़ा ही मार्मिक और व्यंग्यपूर्ण चित्रण किया। उनकी पंक्तियों में विधवा स्त्री की विवशता और बेबसी गहराई से झलकती है-

''कामिनी बनी काम की चेरी-जोहति जोड़ ससुर ने हेरी,
रति ने इत उत की मति फेरी-मिल गई पदवी दास की।
हिल गई हाय हत्यारी।
पतिहीन पतोहू प्यारी।''

आर्य समाज ने स्त्रियों की पीड़ा और उनकी सामाजिक स्थिति को गहराई से अनुभव किया। 'गर्भ रण्डा रहस्य' की भूमिका में स्पष्ट कहा गया कि ''विधवा विवाह का प्रचार न होने से आयज़ जाति की जो दुर्गति हो रही है उसे देखकर आठ-आठ आँसू रोना पड़ता है। पुरुष वृद्धावस्था तक अपने अनेक विवाह करते हैं, पर विधवाओं का विवाह करने मात्र से सनातन धर्म की नौका डगमगाने लगे, यह कितनी हास्यास्पद बात है।''

यह कथन उस समय की कुरीतिपूर्ण मानसिकता पर तीखा व्यंग्य करता है। पुरुषों के लिए अनेक विवाह स्वीकार्य थे, किंतु स्त्रियों के पुनर्विवाह पर धार्मिक और सामाजिक प्रतिबंध लगा दिए जाते थे। आर्य समाज ने इस असमानता को हटाने के लिए जनजागरण का कार्य किया।

सुधारवादी कवि श्रीधर पाठक ने अपनी कविताओं में स्त्रियों के गौरव और शक्ति का गान किया। उन्होंने प्राचीन भारतीय परंपरा का स्मरण कराते हुए 'आर्य महिला' कविता में स्त्री को राष्ट्रबल की जननी के रूप में चित्रित किया-

''हे भारतमाता! अपने इन पुत्रों को पहले का सा बल दे।
हे भारती! दयाकर क्षण में सबकी दुर्बलता तू दल दे।।''

इन पंक्तियों में उन्होंने भारतीय नारी को राष्ट्रोत्थान और समाज-सुधार की प्रेरणा का केंद्र बताया।

श्रीधर पाठक ने 'भारत गीत' में स्त्री को केवल परिवार तक सीमित न मानकर आर्य जीवन, नारी चेतना और राष्ट्रशक्ति का प्रतीक माना। उनकी पंक्तियाँ वास्तव में आर्य समाज के शंखनाद का प्रतिनिधित्व करती हैं-

''आर्य स्वदेश सुख-दुख संगिनी, अखिल श्रेय संचारिणी।
आर्य जगत में जननि पुनः, निज जीवन ज्योत जगाओ।
करो सार्थ कमनीय नाम अहो आर्य कुल कामिनी।
आर्य प्रेम की पुण्य पताका, आर्य गेह की स्वामिनी।।''

सैय्यद अमीर अली मीर ने भी महिला जागरण के विषय में लिखा है-

''ऊसर धरती में होता है, जैसे पुष्ट बीज का नाश,
वैसे ही उर्वरा भूमि में, घुने बीज का सत्यानाश।
धरती और बीज को चुनकर, लाभ उठाते चतुर किसान,
उसी तरह से वर-कन्या का, उचित मेल करते धीमान।।''

उन्होंने अनमेल विवाह की भी भर्त्सना की है-

''देखो तो बूढ़े की बातें, पहुंच चुका यम का फरमान।
तो भी उसको बना हुआ है, अभी जवानी का अरमान।।''

आर्य समाज का नारी-सुधार आंदोलन केवल शिक्षा या विधवा-विवाह तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने समाज की उन गहरी जड़ें पकड़ चुकी कुप्रथाओं पर भी चोट की, जो स्त्रियों की दुदज़्शा के मूल कारण थीं। इनमें से एक प्रमुख प्रथा थी बहुविवाह।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में इस प्रथा का कठोर विरोध किया। उन्होंने वैदिक प्रमाणों के आधार पर स्पष्ट किया कि एक पुरुष और एक स्त्री का वैवाहिक संबंध ही आदर्श और धर्मसम्मत है। बहुविवाह न केवल पारिवारिक कलह का कारण बनता है, बल्कि स्त्रियों के आत्मसम्मान को भी आहत करता है।

स्वामी दयानन्द की इन शिक्षाओं का प्रभाव तत्कालीन कवियों और साहित्यकारों पर भी पड़ा। कवि नाथूराम शंकर ने अपनी कविता में दयानन्द के विचारों का काव्यात्मक समर्थन करते हुए लिखा-

'धार तेज तारुण्य का, एक नारि नर एक।
दो-दो दम्पति प्रेम से, प्रकटें ग्रही अनेक।।

उमंगी महिमा उत्कर्ष की,
सुख-मूल विवाह किया है।'

उस युग में विवाह-प्रथा की सबसे बड़ी कमजोरी थी जन्मपत्रिका मिलान और ग्रह-नक्षत्रों के नाम पर फैलाई गई भ्रांतियाँ। पंडित वर्ग प्रायः कन्या या वर की उम्र छिपाकर अथवा कम-ज्यादा करके, ग्रह-शांति और पूजा-पाठ के बहाने भारी लेन-देन करता था। नाथूराम शंकर ने इन षड्यंत्रों पर तीखा व्यंग्य करते हुए लिखा-

''जन्म पत्रिका मुझे दीजिए, पांच वर्ष कम कर दूंगा,
दुष्ट ग्रहों की शान्ति तुष्टि कर, आयु वृद्धि कर वर दूंगा।
किसी ग्रह को करके राजी, शुभ संबंध मिला दूंगा,
करे अंधेरा दूर भवन का, चन्द्र आननी ला दूंगा।''

उन्होंने 'बूढ़े का ब्याह' जैसी कविताओं में आर्य समाज के जागृति के सन्देश को स्पष्ट किया है।

गोपाल निम्न पंक्तियों में-

''नयन नयन से, हृदय हृदय से, और प्राण से प्राण।
कहते यही मौन भाषा में करिये मेरा त्राण।।
उत्सव की मुदमयी निशा में किसे भला है ध्यान,
जग की कोमल मानवता का होता है बलिदान।''

कवि गोपाल शरण सिंह ठाकुर ने नारी की करुण स्थिति को भी काव्य में प्रस्तुत करते हुए लिखा है-

''कहती है करुण कहानी, रोकर आँखें बेचारी,
उत्तर उनको मिलता है, लाचारी है लाचारी।
लज्जा का निठुर करों से है गला दबाया जाता,
सुख से वंचित बेचारा है प्यार ठोकरें खाता।
करुणा की करुण पुकारें, दीवारों से टकरातीं,
मन की सब अभिलाषाएं मन में ही रह जातीं।।''

उन्होंने करुणा, क्षमा, वात्सल्य और त्याग की मूर्ति 'मां' की भावना को स्पष्ट किया है-

''मानवता है मूर्तिमती तू, भव्य भाव भूषण भण्डार।
दया क्षमा ममता की आकर, विश्व प्रेम की है आधार।।
है करुणा की कालिन्दी तू, वत्सलता की सुरसरि धार।
है आशीष पवित्र हृदय का तेरा अनुपम प्यार दुलार।।''

आर्य समाज ने अनमेल विवाह का भी विरोध किया। **मैथिलीशरण गुप्त** ने इसी विचारधारा पर निम्न पंक्तियाँ लिखी हैं-

प्रतिवर्ष विधवा-वृन्द की संख्या निरंतर बढ़ रही,
रोता कभी आकाश है फटती कभी हिलकर मह।
हा! देख सकता कौन कौन ऐसे दग्धकारी दाह को?
फिर भी नहीं हम छोड़ते हैं, बाल्य-वृद्ध विवाह को।

तत्कालीन स्थितियों में नारियों के उत्पीड़न और उनकी दुर्दशा को काव्य में अभिव्यक्त किया है-

''सुकुमारियां वे भोगती हैं यातना कितनी कड़ी,
जो पूर्ण यौवन काल में भी है बिना ब्याही पड़ी।
वे ग्रीष्म सरिता के सदृश हैं क्षीण दिन-दिन हो रहीं,
कहती नहीं कुछ लाज से पर हृदय में है रो रहीं।।''

उन्होंने इस विषय में अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए कहा है कि ''अपने दुर्बल अस्तित्व की अनुभूति एवं माता-पिता का दुःख उन्हें भीतर ही भीतर खोखला बना देता है और इस असह्य स्थिति से मुक्ति पाने के लिए कई लड़कियाँ आत्महत्या तक कर लेती हैं।''

विधवा के कातर कृंदन को भी उन्होंने वाणी प्रदान करते हुए लिखा है-

''अब हम किसके लिए नाथ, श्रृंगार करेंगी,
किस प्रकार यह शेष आयु हम पार करेंगी?
कब तक हम इस भांति आह ही आह भरेंगी,
तड़प-तड़प जलहीन मीन-सी हाय मरेंगी।''

महिलाओं द्वारा अत्याचारों को भी उन्होंने सशक्त स्वर दिया है-

''तू कभी नहीं कुछ कहती है, चुपचाप सभी कुछ सहती है,
जग में रसधारा बहती है, पर तू प्यासी ही रहती है।
तेरे मन में आबद्ध हुई, रोती हैं सब चाहें तेरी,
उर के भीतर ही गूंज-गूंज रह जाती हैं आहें तेरी।।''

स्पष्टतः स्वतन्त्रता से पूर्व आर्य समाज से प्रभावित हिन्दी कवियों ने नारी उत्थान के विविध आयामों को विवेचित ही नहीं किया अपितु नारी की दयनीय दशा पर भी तीखा व्यंग्य प्रस्तुत किया है।

गणपतिचन्द्र भण्डारी ने पातीवृत्त आदर्श में डूबी हुई नारी के विषय में लिखा है-

नहीं करती हैं विज्ञापन नहीं आन्दोलन करती हैं।
पिलाते विषय के प्याले भी उन्हें अमृत कर पीती हैं।।
हमें नारी से तुमने ही बना डाला घर की गुड़िया।
योग्य सहधर्मचारिणी से मुसीबत की केवल पुड़िया।।

आर्यसमाज ने बाल विवाह का कठोरता के साथ विरोध किया 25 और 18 के अनुपात में विवाह को उन्होंने स्वीकारा है। इसी प्रभाव के कारण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी 'कान्य कुब्ज अबला विलाप' में लिखा है-

कभी-कभी गुड़िया-सी बचपन में ही ब्याही जाती हैं,
जिसके कारण ही अति दुःसह, दुःख जन्म भर पाती है।
प्यारे पिता, बन्धुवर, तुम कब भला होश में आवोगे।
कब हम दुखी दीन अबलाओं पर तुम दया दिखाओगे।

महिलाओं में पर्दा प्रथा, बाल विवाह इत्यादि के विषय में 'पर्दे के प्यार' नामक कविता में मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है-

''सवा हाथ का घूंघट खींचे कुछ मुख को ऐसे ढकती,
डबल लाक-सा पुट पर पुट देकर मुख पर ताला जड़ती,
मानो पाप किया हो ऐसा मुंह न दिखाना चाहती हो।
या कानी बूची नकटी हो जिससे यों घबराती हो।।''

उन्होंने पुनः भारत की होली में इन विचारों को पुष्ट करते हुए अभिव्यक्त किया है-

बहुत दुःख पाते हम सब हैं, बाल-विवाह ता से हाय!
मर जातीं सन्तान कभी औ, कभी गर्भ तक भी गिर जाय।
यदि कोइ बच जाय जन्म ले, वह सब दुःख की गोली है।
रक्त वीर्य सब पानी होके, बल बुधि जरती होली है।

उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त रामचरित्र उपाध्याय गोपाल शरण सिंह, श्रीधर पाठक तथा नाथूराम 'शंकर' ने बाल विवाह का घोर विरोध करते हुए इसकी आलोचना की है। स्पष्टतः आर्य समाज के हिन्दी साहित्य में महिला जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने विधवा विवाह का पुरजोर समर्थन किया जिसका प्रभाव द्विवेदी युगीन कवियों पर पड़ा है। कवि भण्डारी ने नारियों द्वारा उत्पीड़न और अत्याचारों के प्रतिक्रिया स्वरूप वेश्यावृत्ति का विषपान जैसी स्थितियों को स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

❑❑❑